शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2013

भारतीय समाज और डॉ. अम्बेडकर का जीवन दर्शन

डॉ. जोगिन्द्र कुमार यादव
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू)
क्षेत्रीय केन्द्र, चण्डीगढ़

शोध संक्षेप

बाबा साहेब अम्बेडकर आधुनिक भारत के प्रमुख चिंतकों में से एक हैं। उनका चिंतन मुख्य रूप से स्वतंत्रता, मानव समानता, लोकतंत्र और सामाजिक–राजनीतिक मुक्ति (स्वाधीनता) के मुद्दों से जुड़ा है। वह विश्व के अद्भुत चिंतक हैं जिन्होंने बचपन से ही अत्यंत अपमान, गरीबी और सामाजिक कलंक सहा परन्तु फिर भी महान शैक्षिक और दार्शनिक ऊंचाइयों को छुआ। वह एक क्रांतिकारी समाज सुधारक थे जिन्होंने लोकतंत्र में अत्यंत विश्वास और समाज का नैतिक आधार प्रदर्शित किया। उन्होंने भारत में नागरिक और राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण किया और उन विचारधाराओं और संस्थाओं की आलोचना की जिन्होंने लोगों को नीचा दिखाया और दास बनाया। उन्होंने कठोरता और प्रतिक्रिया के साथ अर्थव्यवस्था, सामाजिक संरचनाओं और संस्थाओं, विधि और संविधानवाद, इतिहास तथा धर्म पर अनेक प्रमुख अध्ययन किए। वे भारतीय संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे और विवेकपूर्वक स्पष्टता के साथ इसके प्रमुख प्रावधानों का समर्थन किया तथा इसके द्वारा समर्थन किए गए आदर्शों की उपेक्षा किए बिना तर्कों पर अडिग रहे। उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया था और आधुनिक और सामाजिक रूप से उद्धारपूर्ण आग्रहों का प्रत्युतर देने के लिए अपने हजारों अनुयायियों के साथ इसे नया रूप दिया और आधुनिक भारत में इसके पुनर्जीवन के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

प्रस्तावना:

अम्बेडकर ने आधुनिक युग को मानव विवेक के मिथकों, रीति–रिवाजों और अंधविश्वासों पर मानव विवेक की विजय की दृष्टि से देखा। उनका तर्क था कि विश्व और मानव को मानव के विवेक और प्रयास से स्पष्ट किया जा सकता है। अलौकिक शक्तियों को अपने उद्देश्य के लिए बुलाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। वास्तव में अलौकिक शक्तियां स्वयं कमज़ोर मानव क्षमताएं और मानव विकास की अल्पविकसित अवस्था को व्यक्त करती हैं। अतः उन्होंने कहा कि मानव विवेक की अभिव्यक्ति सकारात्मक रूप से विज्ञान और आधुनिक प्रौद्योगिकी में निहित हैं।

अम्बेडकर के कार्य का मुख्य क्षेत्र संवैधानिक लोकतंत्र था। वे विभिन्न संविधानों के विशेषज्ञ

थे, विशेषकर उन संविधानों के जिन्होंने आन्दोलन की व्यापक अवधारणा को प्रस्तुत किया था। लोगों को एकता के बंधन में बांधने के लिए और सामूहिक कार्यों में लोगों को समान सहभागिता प्रदान करने के लिए कानून का शासन उनकी कल्पना के लिए अत्यंत अनिवार्य था। वह एक तरफ कानून और दूसरी तरफ रीति–रिवाजों तथा लोकप्रिय विश्वासों के बीच अंतःसंबंध के प्रति अत्यंत संवेदनशील थे। लोकतंत्र और कानून पर अम्बेडकर ने जो बल दिया, उसने राज्य की स्वायतता पर भी बहुत ज़ोर दिया। राज्य को समाज में व्याप्त संकीर्ण हितों को छोड़ने की जरूरत है जो प्रायः राज्य को अपने उद्देश्य के लिए एक अस्त्र में परिवर्तित कर देते हैं। उनका तर्क था कि बहुसंख्यक वर्ग जो स्थायी है और राजनीतिक विघटन और पुनर्गठन के लिए जिम्मेदार नहीं है, उन्हें भी संकीर्ण हित माना जा सकता है।

अम्बेडकर भारत में पहले सिद्धान्तवादी थे जिन्होंने यह माना था कि यदि राज्य अधिकारों को कायम रखने के लिए प्रतिबद्ध है तो उसे चाहिए कि वह सुविधावंचितों के लिए राज्य के संवैधानिक आधार पर विचार करे। उन्होंने सुविधावंचित लोगों को निर्धारित करने के लिए

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2013

एक जटिल मानदंड विकसित किया। छूआछूत एक बड़ी सामाजिक हानि है, हालांकि यह अत्यंत अपमानजनक और तिरस्कारपूर्ण है।
अम्बेडकर ने बहुसंख्यकों की सदिच्छा और कल्याण की अपेक्षा अधिकारों की अवधारणा पर आश्रित होने वाले विशेष उपायों पर ज़ोर दिया। वास्तव में स्वयं सदिच्छा को विकसित किया जाना चाहिए और ऐसे अधिकारों की जानकारी होनी चाहिए। इस प्रकार के विकास के अभाव में, सदिच्छा और कल्याण प्रायः संकुचित हितों में परिवर्तित हो जाते हैं जो परोपकार की भाषा में स्वयं छला महसूस करते हैं।

शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध पत्र डॉ. अम्बेडकर के जीवन दर्शन के विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालता है। शोध पत्र के प्रथम चरण में डॉ. अम्बेडकर का संक्षिप्त जीवन परिचय दिया गया है। दूसरे चरण में उनके वैचारिक दर्शन, धार्मिक दर्शन तथा सामाजिक दर्शन का उल्लेख किया गया है। उक्त शोध पत्र में सर्वेक्षण विधि को अपना कर सामग्री एकत्रित की गई है।

जीवन परिचय :

बाबा साहेब अम्बेडकर (1891–1956) का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महू में अछूत महार जाति में हुआ था। उन्होंने बाल्यावस्था और उसके बाद के अपने जीवन में छुआछूत के कारण सभी प्रकार का सामाजिक अपमान सहा। कक्षा में उन्हें शेष विद्यार्थियों के साथ बैठने नहीं दिया जाता था। विद्यालय में उन्हें अपने हाथों से पानी पीना पड़ता था और ऊंची जाति के सदस्य ऊपर से पानी डालते थे। संस्कृत सीखना उनके लिए मना था। इन सभी बाधाओं के बावजूद, उन्होंने मुंबई विश्वविद्यालय से अपनी स्नातक की शिक्षा पूरी की और संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलंबिया विश्वविद्यालय से अपनी स्नातकोत्तर और पीएच.डी. पूरी करने चले गए। वे भारत में विद्यमान अस्पृश्यता (छूआछूत) और जाति व्यवस्था से बहुत गहरे जुड़ गए। साथ ही साथ, उन्होंने भारत की अर्थव्यवस्था, राजनीति और सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले उपनिवेशवाद के प्रभाव की जांच पड़ताल की। कोलंबिया विश्वविद्यालय में अपनी पीएच.डी. उपाधि पूरी करने के बाद वे बड़ौदा महाराजा के प्रशासन की सेवा करने के लिए वापस आ गए जिन्होंने उन्हें अमेरिका में शिक्षा के लिए भेजा था। परन्तु विशिष्ट योग्यताओं के बाद भी, उन्हें बड़ौदा प्रशासन में अस्पृश्यता का दर्द झेलना पड़ा। उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और कुछ समय के लिए वे सिडेनहम कालेज ऑफ कामर्स एण्ड इकानामिक्स, मुंबई में राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर हो गए। उन्होंने 1919 के मांटेग्यू–चेम्सफोर्ड सुधारों से पहले साउथबोरो समिति के समक्ष अभिनिवेदन किया और दलित वर्गों, जिन्हें उस समय अस्पृश्य और निम्न जाति समझा जाता था, के लिए अलग प्रतिनिधित्व का समर्थन किया। उन्होंने जनवरी, 1920 में मराठी में एक पाक्षिक 'मूकनायक' आरंभ किया और कोल्हापुर के शाहू महाराज की अध्यक्षता में उस वर्ष हुए प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन में अग्रणी भूमिका निभाई। अपनी डी. एससी. की उपाधि पूरी करने के लिए उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स में प्रवेश लिया, जिसे उन्होंने 1922 में पूरा कर लिया। तत्पश्चात् 1923 में मुंबई में अपनी कानूनी प्रैक्टिस आरंभ की और अछूतों को एकत्र करने और उन्हें संगठित करने में सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने 1924 में बहिष्कृत हितकारिणी सभा बनाई। 1927 में वे मुंबई विधान परिषद् में मनोनीत हो गए। उन्होंने महाद में चोवदार तालाब में प्रसिद्ध सत्याग्रह का नेतृत्व किया और पानी के उस सांझा तालाब से अछूतों के लिए अधिकारों की मांग की, जिससे उन्हें रोका जाता था। परिणामस्वरूप मनुस्मृति को भी जलाया गया। उन्होंने मराठी में पाक्षिक पत्रिका 'बहिष्कृत भारत' आरंभ किया और 1927 में दो संगठनों 'समाज समता संघ' और 'समता सैनिक' की स्थापना की जिसके माध्यम से दलित वर्ग के लिए समानता की मांग दोहराई। 1928 में दलित वर्ग शिक्षा समिति मुंबई की स्थापना की। उसी वर्ष पाक्षिक पत्रिका 'समता' को भी प्रकाशित किया गया। इन वर्षों में डॉ. अम्बेडकर कानून के

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2013

प्रोफेसर के तौर पर सक्रिय रहे। वे साइमन कमीशन के समक्ष अपना प्रतिनिधिमंडल लेकर गए तथा भारत में संवैधानिक सुधारों के मुद्दे की जांच की मांग की। उन्होंने 1930 में कलराम मंदिर, नासिक में सत्याग्रह का नेतृत्व किया और अछूतों के लिए मंदिर में प्रवेश की मांग की। उन्होंने 1930 में नागपुर में आयोजित प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस की अध्यक्षता की।

1936 में डॉ. अम्बेडकर ने स्वतंत्र लेबर पार्टी की स्थापना की जिसने मुंबई प्रान्त में 1937 के चुनावों में 17 सीटों पर मुकाबला किया और उनमें से 15 सीटें जीतीं। डॉ. अम्बेडकर ने 1942 में एक अलग पार्टी 'अनुसूचित जाति परिसंघ' स्थापित कर ली और वे उसी वर्ष पांच वर्ष की अवधि के लिए वायसराय काउंसिल के सदस्य नियुक्त हो गए। अम्बेडकर को बंगाल से संविधान सभा के लिए चुन लिया गया और उन्होंने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के साथ संयुक्त भारत के लिए आग्रह किया। उन्हें भारतीय संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया तथा वे अगस्त 1947 में नेहरू मंत्रिमंडल में विधि मंत्री हो गए। इन दोनों क्षमताओं में उन्होंने भारत में सार्वजनिक जीवन के लिए एक स्वतंत्र और समतावादी ढांचे के विषय में विचार किया, उसका निर्माण किया और उसकी रक्षा की तथा भारत में सुविधा वंचित लोगों के लिए व्यापक सुरक्षा उपायों तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों और भाषायी एवं सांस्कृतिक समूहों के लिए स्वायत्तता चाही।

अम्बेडकर ने 1951 में नेहरू मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया और भारत में सामाजिक तथा आर्थिक लोकतंत्र की कमी और उसके अभाव में कारगर ढंग से कार्य करने के लिए संवैधानिक लोकतंत्र की अक्षमता के विकल्प तैयार करने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप इस खोज के कारण उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया और भारतीय रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना का प्रस्ताव किया। 6 दिसम्बर 1956 को उनका देहांत हो गया और वे करोड़ों लोगों को बिलखता छोड़कर चले गए।

डॉ0 अम्बेडकर के चिंतन में अनेक आयाम हैं। ऐसे बहुत ही कम मुद्दे हैं जो उनसे अछूते रह गए हों। उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण विषयों पर अपना मत प्रस्तुत किया जो उनके समय का भारत सामना कर रहा था। उनकी बहुमुखी प्रतिभा उनके सामाजिक और राजनीतिक चिंतन, आर्थिक विचारों, कानून और संविधानवाद में परिलक्षित होती है।

वैचारिक दर्शनः

डॉ. अम्बेडकर ने स्थिति के अनुसार उदारवादियों, मार्क्सवादियों और अन्य लोगों से सीमांकन के संदर्भ के आधार पर अपने आपको 'प्रगतिशील अतिवादी' और कभी–कभी 'प्रगतिशील रूढ़िवादी' कहा है। वे स्वतंत्रता के प्रबल समर्थ थे। उन्होंने स्वतंत्रता को सकारात्मक शक्ति और क्षमता के रूप में देखा तथा लोगों को आर्थिक प्रक्रियाओं और शोषण, सामाजिक संस्थाओं और धार्मिक रूढ़िवादिता तथा भय और पूर्वाग्रहों द्वारा प्रतिबन्धित हुए बिना उन्हें अपनी पसन्द चुनने के योग्य बनाया। उनका मानना था कि उदारवाद स्वतंत्रता की संकुचित अवधारणा का समर्थन करता है जिसने कुछ ही लोगों के हाथों में बड़ी मात्रा में संसाधन दे दिए हैं और इस कारण वंचना और शोषण उत्पन्न किया है। उनका यह भी मानना था कि उदारवाद सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं के बारे में असंवेदनशील है जो औपचारिक समानता को प्रोत्साहित करते हुए आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक असमानताओं को बढ़ाता है। उनका तर्क था कि उदार व्यवस्थाओं में अल्पसंख्यकों की गहन असमानताएं छिपी हुई हैं जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में कालों की दशाएं और यूरोप में यहूदियों की दशाएं। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि उदारवाद प्रायः औपनिवेशिक शोषण और व्यापक अन्याय को उचित ठहराने के लिए है। उनका तर्क था कि एक अच्छा समाज अपने पूर्ण विकास के उत्पादन के साधनों के विस्तृत सार्वजनिक स्वामित्व और प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान अवसर की मांग करता है ताकि व्यक्ति अपना पूर्ण विकास कर सके।

वे ब्राह्मणवादी विचारधारा के कड़े आलोचक थे जिसे वे समझते थे कि यह भारत में प्रभावशाली वैचारिक अभिव्यक्ति रही है।

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2013

उनका तर्क था कि यह बुद्ध द्वारा शुरू की गई क्रांति को हराकर अपनी समस्त तीव्रता के साथ पराजित कर पुनः स्थापित हुई। इसने सामाजिक संस्थाओं और संबंधों की व्यवस्था करने में श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धान्त का समर्थन किया, योग्यता के सिद्धान्त की अपेक्षा जन्म के सिद्धान्त को प्रोत्साहित किया, विवेक की उपेक्षा की और कर्मकांड तथा पुरोहिती का समर्थन किया। इसने शूद्रों तथा अछूतों को निरंतर निम्न कार्यों और अपयश की ओर धकेला है। इसने असमानता और संसाधनों और पदों के असमान वितरण का समर्थन किया तथा कर्म सिद्धान्त जैसे नियमों के प्रति अपील द्वारा ऐसे उपायों की धार्मिक स्वीकृति प्रदान की। इसने शारीरिक श्रम की अपेक्षा मानसिक श्रम की श्रेष्ठता के सिद्धान्त को माना। इसे निम्न श्रेणियों और अलग–थलग किए गए वर्गों के प्रति बिल्कुल भी सहानुभूति नहीं है। इसने समाज को अनेक बंद समूहों में विभाजित कर दिया था जिससे वे श्रेणियां समाप्त करने में, समुदाय की भावना विकसित करने और सांझे प्रयासों को प्रोत्साहित करने में असमर्थ थे। इसने संयुक्त जीवन से सुख और दुख छीन लिए, संघर्षों और प्रयासों को कमज़ोर कर दिया, सुखों और आमोद–प्रमोद को दुर्बल बना दिया। ब्राह्मणवाद किसी भी प्रकार के नैतिक मूल्यों और उन मूल्यों पर आधारित दृष्टिकोणों से वंचित था।

अम्बेडकर गांधी और गांधीवाद के कटु आलोचक थे। उन्होंने छूआछूत के उन्मूलन के प्रति गांधी के दृष्टिकोण पर प्रहार किया क्योंकि इस दृष्टिकोण ने शास्त्रों में छूआछूत के प्रतिबंध को मना किया और सवर्ण हिन्दुओं को इसे स्वेच्छा से छोड़ने का आह्वान किया तथा इसके लिए सुधार करने के लिए कहा। अम्बेडकर ने अनुभव किया कि अधिकार और मानवता को उन लोगों की दया और पूर्वग्रह पर नहीं छोड़ा जा सकता जिन्होंने कम आकलन करने में निहित स्वार्थ विकसित किया है। उन्होंने गांधी की तरह जाति–व्यवस्था का सीमांकन नहीं किया, बल्कि श्रेणीबद्ध असमानता को एक ही सिद्धान्त के रूप में देखा। यदि गांधी के आग्रह से छूआछूत समाप्त हो जाती है, जिसे अम्बेडकर असंभव समझते थे, तो भी अछूत शूद्रों के स्तर के रूप में समाज के सबसे निचले पायदान पर ही रहेंगे। अम्बेडकर ने गांधी द्वारा अछूतों को दिया गया 'हरिजन' नाम अस्वीकार कर दिया और इससे घृणा की।

धार्मिक दर्शन :

धर्म के प्रति अम्बेडकर का दृष्टिकोण मिश्रित रहा। उन्होंने व्यक्तिगत ईश्वर में विश्वास का समर्थन नहीं किया। उनका मानना था कि धर्म नश्वरता की भांति समाजों को स्थायी आधार प्रदान करता है और श्रेष्ठ जीवन का सामूहिक कार्य करने के योग्य बनाता है। इस प्रकार का धर्म लक्ष्यों को ऊपर उठाता है, परोपकार और दूसरों के लिए सरोकार को बढ़ावा देता है तथा उन्हें एकता में बांधता है। यह लोगों का ध्यान रखने के साथ–साथ उन्हें प्रोत्साहित करता है तथा व्यक्ति शोषण, अन्याय और अनुचित कार्यों के विरुद्ध संघर्ष करता है।

उन्होंने कहा कि श्रेष्ठ जीवन के लिए स्वतंत्रता, समानता और बंधुता अनिवार्य है और उनके लिए पृथक अधिकारों की सता की रचना किए जाने की जरूरत है। उन्होंने अधिकारों को उदार व्यक्तिवाद की केवल संकुचित सीमाओं में ही नहीं समझा बल्कि एक व्यक्ति और सामूहिक अधिकारों के तौर पर भी समझा। उन्होंने संविधान सभा की बहसों में दोनों प्रकार के अधिकारों का समर्थन किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने नागरिक और राजनीतिक अधिकारों तथा सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों के लिए भी तर्क प्रस्तुत किया। उन्होंने इन अधिकारों को विरोध के रूप में नहीं देखा बल्कि एक–दूसरे को मज़बूत करने के रूप में देखा। यदि अधिकारों के बीच कोई द्वंद्व है तो उन पर नागरिक और राजनीतिक मंचों के माध्यम से चर्चा की जानी चाहिए। उन्होंने अल्पसंख्यकों और सांस्कृतिक समूहों के अधिकारों का भी समर्थन किया ताकि वे अपने–अपने विश्वासों और पहचान को बनाए रख सकें, साथ ही सार्वजनिक मामलों में अपना न्यायपूर्ण स्थान प्राप्त करने के लिए उपयुक्त परिस्थितियां प्रदान हो सकें।

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2013

अम्बेडकर ने विश्व के प्रमुख धर्मों, विशेषकर हिन्दू धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म और बौद्ध धर्म का विस्तृत रूप से उल्लेख किया है। उन्होंने हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म पर बहुत कुछ लिखा। उन्होंने पाया कि हिन्दू धर्म ग्रंथ एकीकृत और संयुक्त सूझबूझ के अनुकूल नहीं हैं। वे विभिन्न मतों और प्रवृतियों में कठोर मतभेदों को प्रतिबंधित करते हैं। वैदिक साहित्य में भी मतभेद हैं, उपनिषद चिंतन का प्रायः वैदिक चिंतन के साथ सामंजस्य नहीं है, स्मृति साहित्य का श्रुति साहित्य के साथ विवाद है, देवता एक–दूसरे के विरुद्ध हैं और तंत्र का मतभेद स्मृति साहित्य के साथ है। अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म की नई व्याख्या विकसित की और इसे सामाजिक रूप से संलिप्त देखा। इसने गरीबों और शोषितों को सुविधा दी और यह संसार के सुख–दुखों से जुड़ा हुआ है। यह ईश्वर के अस्तित्व अथवा आत्मा की अमरता को नहीं मानता। यह विवेक और तर्क को उचित मानता है तथा इस संसार के अस्तित्व का समर्थन करता है, नैतिक व्यवस्था को उचित ठहराता है तथा विज्ञान का समर्थन करता है। उन्होंने स्वतंत्रता, समानता और समुदाय को बोद्ध धर्म की शिक्षाओं के लिए प्रमुख माना।

सामाजिक दर्शन :

जाति और जाति व्यवस्था के बारे में अम्बेडकर की जानकारी में समय–समय पर कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होते रहे। आरम्भ में, उन्होंने जाति की विशेषताओं को मिश्रित सांस्कृतिक वातावरण में विजातीयता पर थोपी गई सजातीयता माना। उन्होंने महसूस किया कि सती, बाल विवाह प्रथाएं और विधवा विवाह प्रतिशेध जैसी बुराइयां इसके अपरिहार्य परिणाम थे। एक बार किसी जाति की अपनी सीमाएं बंद हो गई तो अन्य जातियों ने भी उसका अनुसरण किया। ब्राह्मणों के सामाजिक रूप से संकीर्ण होने से सर्वप्रथम जातियां उत्पन्न हुईं। अम्बेडकर जाति की सजातीय विशेषता पर बल देते रहे परन्तु अन्य विशेषताओं जैसे श्रम–विभाजन साथ–साथ खाना–पीना और जन्म के सिद्धान्त की अनुपस्थिति जैसी अन्य विशेषताओं का अधिक उल्लेख नहीं किया। अम्बेडकर का मानना था कि जाति हिन्दू धर्म की अनिवार्य विशेषता है। अम्बेडकर का तर्क था कि सामुदायिक बंधनों को संचालित किए बिना और स्वतंत्रता तथा समानता को प्रोत्साहित किए बगैर जाति का उन्मूलन प्रायः असंभव हो जाता है। उन्होंने इस उद्देश्य के लिए अंतरजातीय विवाह और अंतरभोज का सुझाव दिया और माना कि अंतरभोज का कार्य इतना कमज़ोर है कि इससे स्थायी संबंध नहीं बन सकते।

अम्बेडकर ने छूआछूत को जाति से अलग माना हालांकि छूआछूत पर भी जाति की तरह ही श्रेणीबद्ध असमानता के उसी सिद्धान्त की छाप है। छूआछूत न केवल जाति अपमान का चरम रूप है बल्कि गुणात्मक रूप से यह अलग रूप है क्योंकि इस व्यवस्था ने अछूतों को दायरे से बाहर रखा और सामाजिक अंतःसंपर्क को दूषित और शोचनीय बनाया। उनका तर्क था कि मतभेदों और अंतरों के बावजूद सभी अछूत एक जैसी असुविधा झेल रहे हैं और सवर्ण हिन्दू उनके साथ ठीक व्यवहार नहीं करते। उन्हें गांव की सीमा के बाहर बस्तियों में रहने के लिए मज़बूर किया जाता है और उनका सर्वत्र तिरस्कार किया जाता है तथा उन्हें मानव संपर्क तथा मानव समाज से दूर रखा जाता है।

भारत में व्याप्त गहरे विश्वासों और छूआछूत की प्रथाओं के बारे में अम्बेडकर का विचार था कि इस बीमारी के लिए कोई समाधान नहीं ढूंढा जा सकता। छूआछूत को दूर करने के लिए पूरे समाज का परिवर्तन करना जरूरी है। दूसरे व्यक्ति के लिए सम्मान और अधिकार केवल संवैधानिक तंत्र के बजाए जीवन पद्धति होना चाहिए। छूआछूत के ईर्द–गिर्द निहित स्वार्थों और पूर्वग्रहों के कारण स्थापित समूहों से ज्यादा कुछ आशा नहीं की जा सकती है। अतः उन्होंने महसूस किया कि स्वयं को मुक्त करने की प्राथमिक जिम्मेदारी स्वयं अछूतों की ही है। इस प्रकार की स्वसहायता के लिए न केवल संघर्षों की जरूरत है बल्कि इसके लिए शिक्षा और संगठन की भी आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न स्तरों पर प्राथमिकताओं के

साथ सवैंधानिक लोकतंत्र भी इस प्रयास में बहुत सहायता कर सकता है।

निष्कर्ष :

अम्बेडकर को एक नेता के रूप में चित्रित किया गया है जिन्होंने अछूतों के हित के लिए कार्य किया। वे वास्तव में देशभक्त थे और उन्होंने भारतीय समाज के सर्वाधिक सुविधावंचित वर्ग और निम्न वर्ग का समर्थन किया। परन्तु इस प्रकार का संरक्षण और समर्थन एक विचारधारा पर आधारित था। वे आलोचनात्मक रूप से अपने समय के संसार में विचारों और विचारधाराओं के साथ जुड़े थे और उनके संबंध में अपने मूल्यांकन तथा निर्णय तैयार किए। वे लोकतंत्र के तीव्र समर्थक थें परन्तु उनका कहना था कि लोकतंत्र को किसी शासन की व्यवस्था में नियंत्रित नहीं किया जा सकता है परन्तु इसे जीवन पद्धति बनाने की आवश्यकता है। वे जाति व्यवसथा और छूआछूत के कट्टर आलोचक थे और उन्होंने इन्हें समाप्त करने का बहुत प्रयास किया। उन्होंने सामाजिक न्याय को अच्छी राज्यव्यवस्था की एक अनिवार्य विशेषता माना और उसके लिए ठोस उपाए सुझाए। उनके विचार उनके समकालीन चिंतकों से उन्हें अलग करते हैं और आज हम उनका सम्मान करते हैं तथा दूसरों से बहुत कुछ अलग होने के कारण वे हमारे लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।

आभार और संदर्भः

1. अप्पादोराय, ए, 'डाक्यूमेंट्स ऑन पालिटिकल थाट् इन माडर्न इंडिया, वाल्यूम–1 एवं 2 (आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1975)
2. बैनजमिन, जोसफ, सिडयूलड कास्टस इन इंडियन पॉलिटिक्स एण्ड सोसाइटी (ई एस एस पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1989)
3. भारिल, चन्द्रा, सोशल एण्ड पॉलिटिकल आइडियाज़ ऑफ बी. आर. अम्बेडकर (अलेक, जयपुर, 1977)
4. डयूच, के, एण्ड पैंथम, टी, (सम्पा0) पॉलिटिकल थाट इन माडर्न इंडिया (सेज, नई दिल्ली, 1986)
5. गांधी, एम. के. हिन्दू धर्म (नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1949)
6. सुमित, सरकार, माडर्न इंडियाः 1855–1947 (मैकमिलन इंडिया, मद्रास, 1983)
7. जिलयोट, इलीनोर, फ्रोम अनटचेबल टू दलित, एस्सेस ऑन दी अम्बेडकर मूवमेंट (मनोहर, नई दिल्ली 1992)